शाश्वत सुख का मार्गदर्शक मासिकपत्र

आत्मधर्म

जुलाईः १९५७ ☆ वर्ष तेरहवाँ, आषाढ़ ☆ अंक तीसरा

: संपादक :
रामजी माणेकचंद दोशी वकील

सर्व दुःखों की परम औषधि

जो प्राणी कषाय के आताप से तप्त हैं, इन्द्रिय-विषयरूपी
रोग से मूर्च्छित हैं, और इष्ट-वियोग
तथा अनिष्ट संयोग से खेदखिन्न हैं,
उन सबके लिये सम्यक्त्व परम
तिहकारी औषधि है।

—सार समुच्चय-३८—

वार्षिक मूल्य
तीन रुपया

[१४७]

एक अंक
चार आना

श्री जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ सौराष्ट्र

नया प्रकाशन—

शासन प्रभाव

जिसे सोनगढ़ के बारे में सत्य हकीकत जानने की अभिलाषा है – ऐसे तत्त्व जिज्ञासुओं को यह पुस्तक पढ़कर सचमुच प्रसन्नता होगी, यह पुस्तिका पूज्य श्री कानजी स्वामी के पुनीत यात्रा प्रयास के समय प्रसिद्ध हुई है; और इस पुस्तक की १०,००० दस हजार कॉपी छपी हैं जिसमें सोनगढ़ का परिचय, यथार्थतया दि० जैन धर्म की प्रभावना के और उन्नति के प्रसंग, दैनिक चर्या, स्वामीजी द्वारा परम प्रभावना के कार्य तथा चारों अनुयोग के शास्त्रों का व्याख्यान और स्वाध्याय का प्रसार तथा पू० श्री कानजी स्वामी क्या कहते हैं ? तथा पवित्र आत्मा धर्ममूर्ति पू० बहिन श्री-बेनजी का परिचय दिया है। मूल्य =) पोस्टेज –) कुल =) की टिकटें भेजकर मंगाइये।

पता—जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

दशलक्षणी धर्म अर्थात् पर्यूषण पर्व

भाद्रपद शुक्ला ५ गुरुवार ता० २९-८-५७ से भाद्रपद शुक्ला १४ शनिवार ता० ७-९-५७ तक दस दिन सोनगढ़ में दसलक्षणी धर्म अर्थात् पर्यूषण के रूप में मनाये जायेंगे। इन दिनों के दरमियान उत्तम क्षमादि धर्मों पर पूज्य गुरुदेव के मुख्य प्रवचन होंगे। इसके उपरांत सामूहिक भक्ति, तत्त्वचर्चा आदि कार्यक्रम भी होता है। बाहर गाँव के अनेक जिज्ञासु इसमें सम्मिलित होते हैं। जिज्ञासुओं को सोनगढ़ आकर लाभ लेना चाहिये।

आत्मधर्म

जुलाई : १९५७ ☆ वर्ष तेरहवाँ, आषाढ़ ☆ अंक ३

पूज्य गुरुदेव का मंगल प्रभाव

अत्यन्त उल्लास पूर्वक शाश्वत तीर्थों की यात्रा

[लेखांक ४]

पूज्य गुरुदेव के साथ पवित्र तीर्थधाम पंचशैलपुर की यात्रा हुई, उसकी खुशी में रात्रि को जिनमंदिर में अद्‌भुत भक्ति हुई थी।

ता. २-३-५७ फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदा के दिन प्रातःकाल श्री जिनेन्द्र भगवान की भव्य रथयात्रा निकली थी। रथयात्रा के पश्चात् भगवान का महाभिषेक हुआ था और राजगृही के जैन समाज की ओर से गुरुदेव को अभिनन्दनपत्र अर्पण किया गया था।

कुंडलपुर नालंदा

दोपहर के समय राजगृही से पावापुर की ओर जाते समय बीच में कुंडलपुर-नालंदा भी रुके थे। कुंडलपुर में जो महावीर भगवान का जन्मस्थान माना जाता है-गुरुदेव ने जिनमंदिर में भक्ति कराई थी और पश्चात् बहिन श्री बहिन ने जन्मकल्याणक की बधाई गवाई थी। नालंदा में खुदाई करने से बोद्धों की प्राचीन विद्यापीठ निकली है, जिसमें श्री अकलंक-निकलंक गुप्त वेष में पढ़ते थे। बाद में वे पकड़े गये थे और उन्हें कारागृह में डाल दिया था। वहाँ से निकल भागने पर फिर पकड़े गये थे और निकलंक का बलिदान दिया गया था। फिर अकलंक स्वामी ने बौद्धों को हराकर जैनधर्म का महान प्रभाव फैलाया था।—यह सारा इतिहास नालंदा विद्यापीठ से सम्बन्धित होने के कारण, उसे देखते समय भक्तजन अकलंक-निकलंक के स्मरण से द्रवित हो जाते थे और हृदय जैनधर्म के प्रति भक्ति से भर उठता था। कुंडलपुर और नालंदा होते हुए गुरुदेव संघसहित पावापुरी पहुँचे।

पावापुरी में अद्‌भुत भक्तिभरी यात्रा

पावापुरी की धर्मशाला में महावीर भगवान की १० फुट ऊँची खड्‌गासन प्रतिमा है जो अत्यन्त सुन्दर और भाववाही है। रात्रि को वहाँ भक्ति हुई थी। गुरुदेव ने भी स्तवन गवाये थे। धर्मशाला में दूसरे भी अनेक मन्दिर हैं। चौबीस तीर्थंकरों के तथा गौतम गणधर के चरणकमल भी हैं।

जलमन्दिर पद्मसरोवर के बीच में बना है; जो भगवान महावीर का निर्वाण स्थान है।

फाल्गुन शुक्ला २ (ता. ३-३-५७)

आज प्रातःकाल जिनमन्दिर में सामूहिक पूजन-भक्ति अत्यन्त उल्लासपूर्वक हुई थी।

पावापुरी के जलमन्दिर में महावीरस्वामी, तथा गौतमस्वामी और सुधर्मस्वामी के चरणकमल विराजमान हैं। सरोवर के बीचों बीच जलमन्दिर का दृश्य अति रमणीक है। वहाँ पूजनभक्ति के लिये भक्तजन गुरुदेव के साथ गाते-गाते पहुँचे। गुरुदेव भगवान के चरणकमलों के पास बैठे और भावपूर्वक हीरा-माणिकों का अर्घ चढ़ाया... उन्होंने चरणकमलों का अभिषेक भी किया। फिर भक्ति प्रारम्भ करने से पूर्व कहा कि देखो, भगवान यहाँ से मोक्ष पधारे हैं... यहाँ से ऊपर भगवान विराजते हैं—ऐसा कहकर हाथ उठाया और सिद्धालय की ओर संकेत किया... फिर भक्ति प्रारम्भ हुई—

आजे वीरप्रभुजी,
निर्वाण पदने पामीया रे...
अहीं थी वीरप्रभुजी,
निर्वाण पदने पामीया रे...
श्री गौतमगणधरजी,
पाम्या केवलज्ञान....
सुरनर आवो आवो,
निर्वाणमहोत्सव उजववा रे....

भक्ति में भगवान के विरह की बात आने पर गुरुदेव गद्‌गद् हो गये थे... वह भक्ति भक्तों के हृदय को भी द्रवित कर रही थी।

भक्ति के समय ऐसा वातावरण था मानों भक्त गुरुदेव से पूछ रहे हों कि—हे गुरुदेव! भगवान यहाँ से किस प्रकार-किस मार्ग से मोक्ष पधारे हैं? वह हमें बतलाइये।

उस समय गुरुदेव भक्ति द्वारा बतलाते हैं कि भगवान यहाँ से समश्रेणी लगाकर सिद्ध हुए थे। वे ऊपर विराजमान हैं—

'अहीं पावापुरी में
समश्रेणी प्रभु आदरी रे....
मुक्तिमां विराज्या
आप प्रभु भगवंत...
अहीं भरतक्षेत्रे
तीर्थंकर विरहा पड्या रे....'

वीर भगवान के पद-पद पर मुक्तिमार्ग में चलते हुए गुरुदेव भक्तों को बतला रहे थे कि—भगवान ने तो तीस वर्ष तक तप किया और उग्र आत्मध्यान कर-करके केवलज्ञान प्राप्त किया... फिर अनेक भक्तों को उबारकर यहाँ से मोक्षपुरी पधारे:—

त्रीस वर्षे तप आदर्या...
लीधा केवलज्ञान,
अगणित भव्य उगारीने...
पाम्य पद निर्वाण....

भगवान के निकट बालक की भाँति भक्ति करते हुए संत हाथ जोड़कर कहते हैं कि—हे नाथ!

अम बालकनी आपे
लीधी नहिं संभाल...
अमने केवलना
विरहामां मूकी चालीय रे...

अन्त में नि:शंकता पूर्वक आत्मसाक्षी से कहते हैं कि—हे भगवान! आपने भले मुक्ति प्राप्त कर ली... इस भी आपके बालक हैं... हम भी आपके शासन को शोभायमान करते-करते आपके पास चले आ रहे हैं।

—ऐसे भावपूर्वक गुरुदेव की भाव भीनी भक्ति पूर्ण हुई। उस तीर्थधाम में गुरुदेव की वह भक्ति देखकर सब भक्तजनों को अत्यन्त आनन्द हुआ...

तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री बहिन ने भी महान उल्लास पूर्वक भक्ति कराई—

निर्वाण महोत्सव थया अहीं...
वीर प्रभु सिद्ध थया छे...
वीर प्रभुजी सिद्ध थया छे,
गौतम केवलज्ञान... वीर प्रभु०

विपुलाचल पर महावीर स्वामी अरहंत पद तथा गौतमस्वामी का गणधर पद; वहाँ से आगे बढ़ने पर पावापुरी में महावीरस्वामी का सिद्धपद और गौतम प्रभु का अरहंतपद;—इस प्रकार पूज्य गुरुदेव के साथ तीर्थंकर-गणधर की अनोखी जोड़ी के पावन धामों की यात्रा होने से सब भक्तों के अंतर में भक्ति का आह्लाद होता था। भक्ति की धुन जागृत होने पर गुरुदेव ने पुनः भक्ति गवाई थी—

वीर प्रभुजी मोक्ष पधार्या,
गौतम केवलज्ञान रे,
वीरजीनुं शासन झूले रे...

गुरुदेव भक्तिरूपी डोरी द्वारा मानो भगवान के शासन को झुला रहे हों—ऐसा उस भक्ति के समय का वातावरण था और भक्त भक्ति की तान में झूम रहे थे।

भक्ति के बाद उमंगभरी पूजा हुई... गुरुदेव जब हाथ में श्रीफल आदि लेकर चढ़ाते थे, उस समय समन्तभद्र स्वामी की उस स्तुति का स्मरण होता था कि—'हे जिनेन्द्र! आपके चरणों की यथार्थ सेवा तो ज्ञानी ही करते हैं।' गुरुदेव के साथ जिनेन्द्रदेव की पूजा करते हुए भक्तों को जो आनन्द हो रहा था, उसका यहाँ वर्णन करना कठिन है!

पूजनादि के पश्चात् जय जयकार से वातावरण गूँज उठा और भक्ति की धुन गाते हुए भक्त मंडल ने पूज्य बहिनश्री बहिन के साथ उस पवित्र धाम की प्रदक्षिणा की... प्रदक्षिणा के बाद जमीन पर घुटने टेक कर दोनों बहिनों ने भावभीने चित्त से मस्तक झुकाकार नमस्कार किया... मानो उस नमस्कार मंत्र के बल द्वारा ऊपर के सिद्ध भगवन्तों को नीचे उतारकर अपने हृदय में पधराया।

—इस प्रकार पूजन-भक्ति के बाद लौटते समय—

'हे वीर तुम्हारे द्वारे पर - एक दर्श भिखारी आया है।'

इस भक्ति की अद्भुत धुन जमी थी और भक्त उसमें निमग्न हो गये थे। वह प्रसंग जिन्होंने अपनी आँखों से देखा है, उनके हृदय में अंकित हो गया है... उस समय भक्तों की आँखें भक्तिरस से भींग जाती थीं।

पूज्य गुरुदेव के साथ ऐसी उल्लास भरी यात्रा हुई, उसके हर्ष में लौटते समय 'वाहवा जी वाहवा....' की धुन गाई जा रही थी—

पावापुरीधाम देखे वाहवाजी वाहवा
मुक्ति के यह धाम देखे वाहवाजी वा०
गुरुदेव की साथ देखे वाहवाजी वा०
गुरुदेव ने भक्ति कीनी वाहवाजी वा०
संतों की साथ यात्रा हुई वाहवाजी वा०
अनंतकाल की भावना पूर्ण हुई वा० वा०

आज (फाल्गुन शुक्ला दूज, रविवार) सोनगढ़ में सीमंधर भगवान की प्रतिष्ठा मंगल दिवस था, और आज ही पावापुरी में गुरुदेव के साथ अपूर्व भक्तिभरी यात्रा हुई, इसलिये भक्तों में अत्यन्त उल्लास था।

करीब एक हजार भक्तजनों के साथ तीर्थयात्रा का वह महान प्रसंग था। भक्तजन गुरुदेव के निकट तत्सम्बन्धी प्रमोद प्रगट करते थे और इस यात्रा से गुरुदेव भी अत्यन्त प्रमुदित थे। जल मन्दिर के सामने वीर प्रभु की अंतिम देशना (समवशरण) का स्थान है, उसे देखने के लिये भी गुरुदेव गये थे। वहाँ समवशरण जैसी रचना (तीन पीठिकाएँ) है और उसमें महावीर स्वामी के प्राचीन (करीब ढाई हजार वर्ष पुराने) चरण कमल हैं। वहाँ गुरुदेव ने भक्तों सहित अर्घ्य चढ़ाया था।

दोपहर को गुरुदेव का प्रवचन हुआ था। प्रवचन में गुरुदेव बारम्बार तीर्थधामों का भाववाही उल्लेख करते थे।

फाल्गुन शुक्ला तीज, ता० ४ के दोपहर को पू० गुरुदेव ने संघ सहित पावापुरी से गुणावा की ओर प्रस्थान किया। गुणावा में गौतमस्वामी के चरण प्रतिष्ठित हैं और वहाँ के मन्दिर में मुनिसुव्रत भगवान की विशाल प्रतिमाजी तथा गणधरदेव के चरण कमल हैं; तदुपरान्त पावापुरी की भाँति एक छोटा-सा सुन्दर जल मन्दिर भी है। सरोवर के बीचों बीच जल मंदिर में गौतमस्वामी के चरण कमल शोभायमान हैं। गुणावा उपशान्त वातावरणवाला सिद्धिधाम है। वहाँ उल्लास-पूर्वक भक्ति हुई थी। पूज्य गुरुदेव ने भी भक्ति गवाई थी।

गुणावा से चलकर गुरुदेव गया पधारे। गया शहर के जैनसमाज ने गुरुदेव का संघ सहित

भव्य स्वागत किया और गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र अर्पित किया। कुछ भक्तजन गुणावा से सीधे सम्मेदशिखर गये थे और वहाँ रात्रि को जिन मन्दिर में भक्ति की थी।

पूज्य गुरुदेव फाल्गुन शुक्ला ५, ता० ६ के सबेरे १० बजे सम्मेदशिखरजी (मधुवन) पधारे थे। पवित्र तीर्थधाम में जैनसमाज ने उत्साहपूर्वक गुरुदेव का स्वागत किया... शाश्वत तीर्थधाम में आने से गुरुदेव भी अत्यन्त प्रसन्न थे... तीन-चार हजार श्रोताओं की सभा में मंगल-प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने कहा कि—

अनंत तीर्थंकर और संत मुनिवर यहाँ से मोक्ष गये हैं, इसलिये यह सम्मेदशिखर तीर्थ मंगल है। देखो, यहाँ से ऊपर अनंत सिद्ध भगवन्त विराजमान हैं। जिस भाव से आत्मा का ज्ञान-आनंद स्वभाव प्रगट हुआ, वह भाव भी मंगल है। धवला में तो वीरसेनाचार्य कहते हैं कि—भविष्य में मोक्ष प्राप्त करनेवाला आत्मद्रव्य भी मंगल है, क्योंकि अल्पकाल में केवलज्ञान होना है। और जिस काल में आत्मा मुक्ति को प्राप्त हुआ, वह काल भी मंगल है। जिसने आत्मा के ज्ञान-आनंदस्वभाव की प्रतीति करके अपने में सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप मंगल प्रगट किया, वह जीव भगवान को भी अपने मंगल का कारण कहता है और भगवान जहाँ से मोक्ष पधारे—ऐसे इन सम्मेदशिखरजी आदि तीर्थधामों को भी वह मंगल का निमित्त कहता है, क्योंकि ऐसी निर्वाणभूमि देखकर उसे मोक्षतत्त्व का स्मरण होता है। इसप्रकार मोक्षतत्त्व की प्रतीति और स्मरण में यह भूमि निमित्त है, इसलिये यह भूमि भी मंगल है। इसकी यात्रा के लिये हम यहाँ आये हैं।

इस प्रकार द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव सर्वप्रकार से मांगलिक किया था।

तीर्थधाम में ऐसा उल्लास पूर्ण मांगलिक सुनकर सबको महान हर्ष हुआ था। गुरुदेव के आते ही तीर्थधाम का वातावरण उल्लसित एवं प्रफुल्लित हो गया था। वहाँ पहुँचने पर संघ में करीब पन्द्रह सौ जितने भक्तजन हो गये थे और गुरुदेव के साथ उस शाश्वत सिद्धिधाम से भेंटने के लिये सबके हृदय आतुर थे कि—कब सिद्धिधाम से भेंट करें? कब गुरुदेव के साथ यात्रा करके वह सिद्धिधाम देखें?

मंगल-प्रवचन के पश्चात् भोजनादि से निवृत्त होकर पूज्य कानजीस्वामी तुरन्त ईसरी क्षु० श्री गणेशप्रसादजी वर्णीजी से मिलने गये थे....

दोपहर की प्रवचन-सभा का दृश्य बहुत सुन्दर था। तीन मुनि, दो अर्जिकाएँ, अनेक

क्षुल्लक, ब्रह्मचारी, विद्वान तथा प्रतिष्ठित गृहस्थ और तीन-चार हजार श्रोताजनों से सभा शोभायमान हो रही थी। गुरुदेव ने 'नमः समयसाराय'—इस श्लोक पर अद्‌भुत भावपूर्ण प्रवचन किया था। सम्मेदशिखर में ऐसी अद्‌भुत सभा और इतने विशाल संघ सहित यात्रा एक महान प्रसंग था।

रात्रि को जिन मन्दिर में अत्यन्त उल्लासपूर्वक भक्ति हुई थी।

फाल्गुन शुक्ला ६ ता० ७ के दिन प्रातः काल पूज्य गुरुदेव भक्तों सहित तलहटी के मन्दिर में दर्शनार्थ पधारे थे।

सम्मेदशिखर जैसे महान तीर्थधाम को सुशोभित करनेवाला तलहटी का अद्‌भुत जिन वैभव देखकर गुरुदेव और भक्तजन प्रसन्न हुए थे। वहाँ सुन्दर कलामय मानस्तंभ, पार्श्वनाथ भगवान की उपशांत रस में झूलती हुई विशाल प्रतिमाजी, पुष्पदन्त भगवान, चन्द्रप्रभ भगवान सहस्त्रकूट जिनालय, चौबीस खड्‌गासन भगवंत, उनमें महावीरस्वामी की बड़ी प्रतिमाजी, नन्दीश्वर जिनधाम की विशाल रचना, सीमंधर प्रभु के चरण कमल आदि अद्‌भुत जिनेन्द्र वैभव हैं जिसके भक्तिपूर्वक दर्शन किये थे।

तत्पश्चात् जिन मन्दिर में सामूहिक-पूजन हुई। गुरुदेव ने भी पूजा में भाग लिया था। जब पाँच सौ से भी अधिक भक्तजन गुरुदेव के साथ धामधूम से जिनेन्द्र भगवान की पूजा कर रहे थे, वह दृश्य अत्यन्त भक्ति प्रेरक थे। सम्मेदशिखर धाम की तथा सिद्ध भगवान आदि की पूजाएँ हुई थीं। दोपहर को गुरुदेव का भाव पूर्ण प्रवचन हुआ, वहाँ के प्रवचन अत्यन्त भाव पूर्ण होते थे, जिनको सुनकर हजारों श्रोताजन एवं विद्वान भी मुग्ध हो जाते थे।

गुरुदेव प्रवचनों में बारम्बार भाव पूर्ण कहते थे कि—'कल तो सम्मेदशिखर के ऊपर जाना है; वहाँ ऊपर के सिद्ध भगवान दिखलायेंगे।'

शाश्वत् तीर्थधाम की अपूर्व यात्रा

फाल्गुन शुक्ला सप्तमी, (ता० ८-३-५७)—आज का दिन गुरुदेव की संघसहित सम्मेद -शिखर तीर्थधाम की यात्रा का महान दिवस था! अष्टाह्निका भी आज से प्रारम्भ होती थी, तदुपरान्त सुपार्श्वनाथ भगवान के मोक्ष कल्याणक का भी आज दिन था; चन्द्रप्रभ भगवान के कल्याणक का भी आज दिन था। ऐसे मंगलमय शुभ दिन को गुरुदेव के साथ शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा करके सब भक्तों को महान आनन्द हुआ था।

रात्रि के दो बजे ही गुरुदेव तैयार हो गये... और सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करके उस

शाश्वत सिद्धिधाम की यात्रा का मंगल प्रारम्भ किया... सैकड़ों भक्त भी साथ चल रहे थे... प्रातःकाल पाँच बजे करीब एक हजार भक्तों के साथ गुरुदेव ऊपर पहुँच गये... आज की महा मंगल यात्रा की चर्चा गुरुदेव प्रसन्नतापूर्वक बारम्बार करते थे।

सर्व प्रथम कुंथुनाथ भगवान की टोंक आती है। सूर्योदय के समय वहाँ दर्शन और चरण स्पर्श करके सबने अर्घ्य चढ़ाया... सम्मेदशिखरजी से इस चौबीसी के बीस तीर्थंकर तथा करोड़ों मुनिवर मोक्ष पधारे हैं। ऊपर पच्चीस टोंके हैं; जिन पर भगवान के चरण कमल विराजमान हैं। प्रारम्भ में गुरुदेव ने पहली टोंक पर एक स्तवन गवाया था... गाते-गाते बीच में कहा कि देखो, यहाँ से अनंत तीर्थंकर और मुनि मोक्ष पधारे हैं; वे अनंत सिद्ध भगवन्त इस समय ऊपर विराजमान हैं... ऊपर पंक्ति में अनंत सिद्ध भगवन्त विराज रहे हैं, उनका यहाँ स्मरण होता है।

आज का महामंगल प्रसंग है

* यहाँ से अनंत जीव मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, इसलिये यह **भूमि** मंगल है
* आज भगवान के मोक्ष का दिन है, इसलिये यह **काल** मंगल है।
* आत्मद्रव्य अल्पकाल में मोक्ष प्राप्त करनेवाला है, इसलिये वह **द्रव्य** मंगल है।
* और आज का **भाव** मंगल है।

—इस प्रकार हमारे लिये सब मंगल है।

गुरुदेव के श्रीमुख से शाश्वत् तीर्थराज की यात्रा के प्रारम्भ में इस प्रकार मांगलिक सुनकर सब भक्तजनों ने हर्षनाद पूर्वक आनन्द व्यक्त किया था।

पश्चात् भक्ति आगे बढ़ी और गुरुदेव बीच में रुककर कहने लगे कि—यह पहली टोंक कुंथुनाथ भगवान की है। 'कुंथु' का अर्थ है पृथ्वी में स्थित भगवान ज्ञान—आनन्दादि अनन्त गुणों स्वरूप चैतन्य-पृथ्वी में स्थिर रहनेवाले हैं। यों तो यहाँ के कंकर-कंकर में अनंत जीव मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, किन्तु निकटस्थ काल के हिसाब से वर्तमान चौबीसी में श्री कुंथुनाथ भगवान यहाँ से मोक्ष गये हैं। अनन्त सिद्ध भगवंत यहाँ अपने सिर पर विराजमान हैं। मोक्षपद जगत में सर्वश्रेष्ठ है, इसलिये वे लोक में सर्वश्रेष्ठ उच्च स्थान पर विराजते हैं।—इत्यादि अनेक प्रकार से गुरुदेव भक्तजनों को सिद्ध भगवन्तों की महिमा समझाते थे... और 'ऐसे सिद्ध भगवन्तों की अपने हृदय में स्थापना करके उनका ध्यान करो'—ऐसी प्रेरणा भक्तों के हृदय में जागृत करते थे। तत्पश्चात् पू०

बहिन श्री बहिन ने भी नये-नये स्तवनों द्वारा अद्‌भुत भक्ति कराई थी। तीर्थधाम हजारों भक्तों से भर गया था... चारों ओर के मार्ग यात्रियों से छा गये थे।

एक के बाद एक टोंक की यात्रा करते-करते और भक्तिपूर्वक अर्घ्य चढ़ाते-चढ़ाते सुपार्श्वनाथ भगवान की टोंक पर पहुँचे... आज सुपार्श्वनाथ भगवान का मोक्ष कल्याणक होने से वहाँ खास भक्ति हुई थी। गुरुदेव ने सुपार्श्व प्रभु के चरण कमल का भावपूर्वक अभिषेक किया... और पश्चात् 'हुं एक शुद्ध सदा अरूपी, ज्ञान दर्शनमय खरे'—यह धुन बोलने के बाद 'अपूर्व अवसर' की कुछ गाथाएँ अत्यन्त उपशांत भाव से बोले थे... उस समय का वातावरण भक्ति एवं उपशांत भावना से भर गया था।

फिर अन्तिम पार्श्वनाथ भगवान की टोंक पर भी पू० गुरुदेव ने भक्तिपूर्वक यही स्तवन गवाये थे। अन्त में पू० बहिन श्री बहिन ने भी एक स्तवन गवाया था... और इस प्रकार अत्यंत आनन्द एवं जय-जयकारपूर्वक पू० गुरुदेव की शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा संघसहित पूर्ण हुई थी....

जय हो श्री सम्मेदशिखरजी शाश्वत तीर्थधाम की!

सम्मेदशिखरजी की यात्रा दरमियान—

मधुवन में श्रीमान् पं० बंशीधरजी साहब इन्दौर का

भावपूर्ण भाषण

[मधुवन में ता० १६-३-५७ के दिन प्रवचन के बाद श्रीमान् पंडितजी ने बहुत गद्‌गद् भाव से भाषण करके, पू० श्री कानजी स्वामी के प्रति अपने जो भाव प्रगट किये, सो यहाँ दिये जा रहे हैं]

पहले के कार्यक्रम के अनुसार ऐसी आशा थी कि यह अमृत से भरा कुण्ड फिर से प्राप्त होगा... किन्तु अब प्रोग्राम बदल जाने पर (स्वामी जी आज ही यहाँ से प्रस्थान करेंगे इसलिये) यह वाणी सुनने को नहीं मिल सकेगी... (ऐसा बोलते हुए पंडितजी गदगदित हो गये और थोड़ी देर तक बोल नहीं सके... आगे चलकर आपने कहा—) **अनंत चौबीसी के तीर्थंकरों और आचार्यों ने सत्य दिगम्बर जैनधर्म को या मोक्षमार्ग को प्रगट करनेवाला जो संदेश सुनाया, वही आपकी वाणी में हमारे सुनने में आ रहा है,—जिसके सुनते ही अकस्मात् निसर्ग से प्रतीत हो जाती है, और पदार्थ का यथार्थ श्रद्धान हो जा सकता है।**

सम्यग्दर्शन क्या चीज़ है और कितनी महत्त्व की चीज़ है, यह आप समझाते हैं। दृष्टि अन्तर की चीज़ है, उसका कोई पढ़ने-लिखने से संबंध नहीं है। अन्तर की दृष्टि जमने का संबंध शास्त्र के

साथ नहीं है, अमुक क्रिया से या शास्त्र से वह प्राप्त हो जाय—ऐसा नहीं है, वो तो अन्तरंग की चीज़ है। हमारी तो भावना है कि सम्यक् दृष्टि प्राप्त हो—जिसकी वजह से आत्मा के स्वरूप की प्राप्ति हो जाय। सम्यक्दृष्टि हुये पीछे हमारा जो कुछ जानना है, वह सम्यग्ज्ञान है, और जो आचरण है, वह सम्यक्चारित्र है। सम्यग्दर्शनपूर्वक के ज्ञान-चारित्र से ही मुक्ति होगी, इसके सिवा और कोई शास्त्रीय ज्ञान या दैहिक क्रियाकांड मोक्षमार्ग नहीं है; यही बात स्वामीजी समझा रहे हैं।

दु:ख से छूटने के लिये व सुख की प्राप्ति के लिये जैन तीर्थंकर-आचार्यों ने कहा है कि तुम स्वयं अपने आप पर से भिन्न आत्मज्ञान करके अन्तरात्मा हो करके स्वयं परमात्मा बन सकते हो; इसी का प्रतिपादन यहाँ पर महाराजजी के प्रवचन में हो रहा है।

पराधीन बनाकर-भक्त बनाकर-शरण में लेकर के मोक्ष देने की बात करना, वह तो परतंत्रता है। तीर्थंकरों ने स्वतंत्रता की बात की है। आत्मा को पर से विभिन्न अपने आप में जानकर, स्थिर होकर तुम स्वयं परमात्मा बन जाओगे। यही मार्ग आज यह संत अपने प्रवचनों में दर्शा रहे हैं। **महावीर भगवान ने जो कहा और कुन्दकुन्द आदि आचार्यों ने जो कहा, वही आज ये (महाराज श्री) प्रसिद्ध कर रहे हैं।**

(सभा में हर्षनाद)

— ऐसे आध्यात्मिक-सन्त ने स्वयं को आनंदित बनाया है और वीतरागता तथा स्वतंत्रता की घोषणा करके उसी का उपदेश दे रहे हैं। उस मार्ग में आनेवाले मुमुक्षु भी अपने को महा सद्भागी मान रहे हैं कि हमें स्वतंत्रता के मार्ग दर्शानेवाले ऐसे सन्त मिले।

वस्तु की योग्यता के बारे में आपका विवेचन अनोखा है; योग्यता वस्तु का स्वभाव है—ऐसा बतानेवाला देव-शास्त्र-गुरु सच्चा है। ऊपरी दृष्टि वालों को 'ऐसा क्यों ? ऐसा करते तो ऐसा होता !'—ऐसा लगता है, लेकिन सचमुच में जैनाचार्यों का ऐसा अभिप्राय नहीं है।

'चरित्तं खलु धम्मो'—यह तो मोह क्षोभरहित आत्मपरिणाम है, और वही धर्म है। नीचे के दर्जे में रागी प्राणी की क्रिया-जिसे सराग चारित्र कहते हैं - वह मोक्षमार्ग नहीं है, वह तो 'संसार-क्लेशफलत्वात्' हेय है। मोक्षमार्ग तो वीतराग चारित्र है। लेकिन जो संभवत: मोक्षसुख नहीं चाहते और संसारसुख चाहते हैं, वही उस पुण्यक्रिया को उपादेय समझते हैं। किन्तु वे पुण्यक्रियानुष्ठान मोक्ष दे देंगे-ऐसा हरगिज नहीं।

आपकी बात सुनते सुनते लोगों को ऐसा लग जाता है कि—'बस ! जब देखो तब मोक्ष की

ही कथा ?–आत्मा की ही कथा ?' लेकिन वही तो दुर्लभ है, और वही तो मतलब की बात है। हम तो स्वाधीन बनना चाहते हैं। पहले दृष्टि भेद (सम्यग्दर्शन) कीजिये। दृष्टिभेद होने के पीछे थोड़ा-सा भी पढ़ना-लिखना सार्थक होगा। भले ही आगमधर हो और कठिन आचरण भी करते हों, लेकिन भीतरी दृष्टि के बिना वह कुछ सार्थक नहीं है, ऐसा ही जैन शास्त्रों का उपदेश है।

मैंने आपके प्रवचनों का श्रवण किया, उसमें मुझे ऐसी ही दृष्टि विदित हुई; **आपकी वाणी में तीर्थंकरों का और कुन्दकुन्दस्वामी का ही हृदय था।** इसका अवलंबन लेकर लोगों की जो प्रवृत्ति हो, वह मुमुक्षु के लिये उपादेय है। लोग उसे न समझ करके न जाने किस किस प्रकार के गलत अभिप्राय कर लेते हैं!

आपका प्रचार अभी तो यात्रा के निमित्त से हुआ है, यात्रा तो सकुशल होगी ही,—**लेकिन आपकी दृष्टि से जो तत्त्व प्रतिपादित होता है, वह जगत के लिये कल्याणकारी है।** (सभा में बड़े हर्षपूर्वक तालीनाद)

अन्त में वे श्रावक-श्राविका व ब्रह्मचारी लोग भी हमारे लिये आदरणीय और अनुकरणीय हैं–जो आपकी छत्रछाया में रह करके आत्मकल्याण कर रहे हैं।

सम्मेदशिखरजी की यात्रा दरमियान—

मधुवन में श्रीमान् पं० फूलचंद्रजी साहब का भावपूर्ण संक्षिप्त भाषण

[ता० १६-३-५७ के दिन मधुवन में श्रीमान् पं० बंशीधरजी साहब के भाषण के बाद पं० फूलचंद्रजी साहब ने भी संक्षिप्त वक्तव्य के द्वारा अपना भाव व्यक्त किया था – जो यहाँ दिया जाता है]

हमारे पू० पंडितजी (बंसीधरजी साहब) हमारे गुरुजी हैं, उन्होंने आपके (पू० कानजी स्वामी के) बारे में बहुत स्पष्ट कह दिया। जब आप खड़े हुए, हमने सोचा था कि आप बहुत मर्यादा में रह करके बोलेंगे,—लेकिन हमने देखा कि भावना मर्यादा का उल्लंघन करती है।

महाराजजी का जो प्रवचन हो रहा है, उसके बारे में कुछ लोगों में भ्रांति फैली हुयी है, मैं कहता हूँ कि वे लोग आ करके प्रवचन सुनें; ऐसा काम न करें कि जनता को सम्यग्ज्ञान के लाभ में बाधक हो।

कल रात को जिनमंदिर में इन लोगों की भक्ति हम सबने देखी; मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या ऐसी भक्ति हमने कभी देखी ? मैं आपसे पूछता हूँ कि ऐसी भक्ति हमने कभी देखी है।

पू० स्वामीजी के साथ इन्दौर से मैं संपर्क में रहा आता हूँ। मैं आपकी और संघ के सदस्यों की क्रिया, व्यवहार, धर्म की लगन, भक्ति—जो भी देख रहा हूँ, उस पर से एक पंडित के नाते-विद्वत्परिषद के अध्यक्ष के नाते मैं घोषित करता हूँ कि ये लोग पूरे दिगम्बर हैं—सच्चे दिगम्बर हैं—

धर्मबन्धु के नाते हमें उनका स्वागत करना चाहिए, और स्वामीजी के उपदेश का लाभ लेना चाहिये। यहाँ की जनता उनसे परिचित नहीं है, अत: जनता से कोई अनुचित प्रवृत्ति न हो जाय—इसलिये हमें स्थिति को सम्हाल लेना चाहिये। हमारी इच्छा है कि-स्वामीजी का जहाँ-जहाँ आगमन हो, वहाँ जनता स्वागत करे और आपके प्रवचन से लाभ उठावें।

सागर के पं० मुन्नालालजी साहब की भावना

मधुवन में ता० १६-३-५७ के दिन पं० बंशीधरजी व पं० फूलचन्द्रजी-पंडितद्वय के भाषण के बाद में सागर विद्यालय के मंत्री पं० मुन्नालालजी साहब ने भी संक्षिप्त में अपनी भावना व्यक्त करते हुए कहा कि—

स्वामीजी के विषय में कोई शंका नहीं। दि० जैन विद्यालय-सागर का जो उत्सव यहाँ की पावन भूमि में संतों के सान्निध्य में हुआ है, उसके लिये हम आपके अत्यन्त आभारी हैं। भविष्य में हमारे स्नातकों को सोनगढ़ भेज करके वहाँ की दृष्टि प्राप्त करने की हमें प्रेरणा हुई है।

सोनगढ़ से प्रकाशित हिंदी मोक्षशास्त्र के संबंध में कुछ स्पष्टता

	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	नोंध
(१)	८६	१२	प्रतिपाति	अप्रतिपाति	(गुजराती दोनों संस्करण में 'अप्रतिपाति' छपा है, हिन्दी संस्करण में प्रेस की भूल से 'अ' छूट गया है।)
(२)	२६७	१२	एकेंद्रिय से असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के नियम से सम्मूर्च्छन	एकेंद्रिय से चतुरिंद्रिय जीवों के नियम से सम्मूर्च्छन जन्म होता है और असैनी तथा	(मूल टीका पं० पन्नालालजी साहित्याचार्य कृत मोक्षशास्त्र टीका आवृत्ति द्वितीया पृ० ४४ तथा तृतीया आवृत्ति पृ० ४५ के आधार पर से लिखी गई थी, परन्तु वास्तविक स्वरूप यहाँ दी हुई शुद्धि के अनुसार है।)

(३) अध्याय २ सूत्र ६ की टीका में (पृ० २२५ में) प्रथम प्रश्न के उत्तर में लिखा है कि—'इस प्रकार जहाँ मोहभाव होता है, वहाँ वर्तमान गति में जीव अपनेपन की कल्पना करता है, इसलिये इस अपेक्षा से गति को औदयिकभाव में गिन लिया गया है।'

इसके सम्बन्ध में निम्न आधार है—

(अ) ××××× यद्यपि चारों गतियाँ नामकर्म के उदय से प्राप्त होती हैं, पर गतियों में ममता और अहंकार का कारण मोहनीय कर्म का उदय ही है। इसीसे जीवभावों में चारों गतियों की परिगणना की गई है। ××× उदाहरणार्थ गति नामकर्म का उदय क्षीणमोह आदि गुणस्थानों में भी पाया जाता है, पर वहाँ एतन्निमित्तक कर्म का बन्ध नहीं होता। इसलिये जीवभावों की अपेक्षा गतियों में औदयिकता का कारण मोहनीय कर्म ही है, यह सिद्ध होता है। वैसे तो नामकर्म भी जीव के प्रतिजीवी

गुणों का घातक है, पर इस दृष्टि से यहाँ भावों का विचार नहीं किया गया है।

[देखो पं० फूलचन्दजी सि०शा० सम्पादित पंचाध्यायी, पृष्ठ ३२०-३२१]

(ब) पंचाध्यायी-उत्तरार्ध गाथा १०२५ में लिखा है कि—

'घातिया-अघातिया कर्मों के उदय से होनेवाले औदयिकभावों में भी यह भेद है, जैसे कि इन भावों में केवल मोहजन्य वैकृतिक भाव ही सच्चा विकारयुक्त भाव है और बाकी के सब लोक रूढ़ि से विकारयुक्त औदयिकभाव है - ऐसा समझना चाहिये।'

(देखो—पं० श्री देवकीनंदनजी कृत टीका पृ० ४३३-४३४ पं० श्री फूलचन्दजी कृत टीका में यह गाथा का नं० १०२२ है, उसका अर्थ तथा विशेषार्थ पृ० ३१४-३१५ में है।)

(क) 'गतिभाव' मोहकर्म रहित लेने में आवे, तब वह लोकरूढ़ि से औदयिक भाव है और वह चौदहवाँ गुणस्थान के अन्त पर्यंत रहता है - ऐसा समझना चाहिये।

(ड) इस संबंध में चर्चा पं० श्री देवकीनंदनजी कृत टीका में गाथा ९८० से १०५५ (पृष्ठ ४१५ से ४४४) तक है, तथा पं० श्री फूलचन्द्रजी कृत टीका में गाथा ९७७ से १०५२ (पृ० ३०७ से ३२१) तक है और उसमें पृ० ३२०-३२१ पर जो विशेषार्थ है, वह इस विषय पर अच्छा प्रकाश डालता है। जिज्ञासुओं को चाहिये कि वे इसको अवश्य पढ़ लें।

'सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः'

कष्ट सहकर भी, दृढ़ वैराग्यपूर्वक ज्ञानभावना का उपदेश

[भावप्राभृत गाथा ५९-६२ के प्रवचनों से]

कोई जीव ज्ञान की चर्चा तो बहुत करता है किन्तु आचरण किंचित्मात्र नहीं करता, विषय-कषायों से विमुख होकर ज्ञानस्वभावोन्मुख नहीं होता; तो मात्र शास्त्रों की जानकारी से उसे कोई सिद्धि नहीं होती। 'मैं ज्ञानस्वभावी हूँ'—इस प्रकार यदि आत्मा का यथार्थ ज्ञान करे तो उस ओर उन्मुख हुए बिना न रहे तथा विषय-कषायों की रुचि छूट जाये; इसलिये जो जीव विषय-कषायों से विमुख नहीं हुआ; स्वच्छन्दपूर्वक विषय-कषायों में ही वर्तता है, वह अज्ञानी जीव सिद्धि को प्राप्त नहीं होता।

इसी प्रकार कोई अन्य जीव व्रत-तपादि का आचरण तो बहुत करते हैं, किन्तु आत्मा क्या है - उसे नहीं जानते; कषायों की मन्दता तो करते हैं, किन्तु आत्मा, कषायरहित ज्ञानस्वभावी है, उसे नहीं जानते, तो मात्र शुभ आचरण से उन्हें कुछ भी सिद्धि नहीं होती। ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा के भान बिना यथार्थ चारित्र नहीं होता। मन्दकषायरूप व्रत-तप से ही जो सिद्धि मानता है किन्तु चैतन्यस्वरूप को नहीं जानता तो उसके समस्त व्रत-तप क्लेशरूप हैं, मोक्ष के लिये वे व्यर्थ हैं। जो जीव चैतन्यस्वरूप आत्मा को जानता है अर्थात् सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान करता है, और उसमें लीनतारूप चारित्र भी धारण करता है, वही मुक्ति को प्राप्त होता है। सम्यग्ज्ञान होने पर भी जब तक चारित्रदशा धारण न करे अर्थात् चैतन्यस्वरूप में लीनता न करे, तब तक साक्षात् मुक्ति नहीं होती और सम्यग्ज्ञानरहित व्रत-तप तो मात्र पुण्यबन्ध का ही कारण है; उससे कोई सिद्धि नहीं होती।—इस प्रकार सम्यग्श्रद्धा-सम्यग्ज्ञान और उस ज्ञानसहित सम्यक्चारित्र ही मोक्ष का कारण है।

तीर्थंकर का आत्मा नियम से उसी भव में मोक्ष प्राप्त करनेवाला होता है; जन्म ले तभी से आत्मज्ञानसहित होता है; तथापि जब वे तीर्थंकर भी चिदानन्दस्वरूप में लीन होकर आनन्द में झूलती हुई चारित्रदशा धारण करते हैं, तभी केवलज्ञान और मोक्ष प्राप्त करते हैं। चारित्रदशा के बिना किसी जीव की मुक्ति नहीं होती। यहाँ भावप्राभृत में मोक्ष के कारणरूप भावलिंग बतलाना है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप जो भावलिंग है, वही मोक्ष का कारण है। तीर्थंकर का आत्मा भी जब

तक गृहवास में-राजपाट में हो, तब तक सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान होने पर भी मुनिदशा या केवलज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता। जब बाह्य में सर्व परिग्रह रहित होकर, अंतर में चैतन्य का ध्यान करके लीन होता है, तभी चारित्रदशा-मुनिदशा प्रगट होती है; और ऐसी भावलिंगी मुनिदशा के पश्चात् ही केवलज्ञान तथा मुक्ति होती है।

यहाँ तीर्थंकर भगवान का तो उदाहरण दिया है। वह उत्कृष्ट उदाहरण देकर ऐसा समझाते हैं कि सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञानपूर्वक सम्यक्चारित्र द्वारा ही मुक्ति होती है; इसलिये ज्ञानसहित चारित्र में तत्पर होना चाहिये-ऐसा उपदेश है। चैतन्य का ज्ञान करके उसमें चरना, सो चारित्र है। चैतन्य के ज्ञानसहित उसमें लीनतारूप क्रिया, वह मोक्ष का कारण है।

जो जीव बाह्यलिंग सहित-वस्त्ररहित दिगम्बरत्व का धारी है, २८ मूलगुणों का पालन करता है, शास्त्र पढ़ता है, व्रत-तप पालता है, निर्दोष आहार लेता है-इस प्रकार बाह्य में द्रव्यलिंगरूप मुनिपना पालन करता है, किन्तु अंतर में भावलिंग से रहित है; मुनि का भावलिंग जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, उसे धारण नहीं करता, वह जीव मोक्षमार्ग से भ्रष्ट है। पर से भिन्न और चिदानन्द -स्वभाव से एकाकार ऐसे आत्मा का अनुभव नहीं है-शांति का वेदन नहीं है और मात्र शुभराग से द्रव्यलिंग की क्रियाएँ करता है, वह भी मोक्षमार्ग से रहित है; उसने राग में ही जागृति रखी है किन्तु राग से भिन्न होकर चैतन्य को जागृत नहीं किया है। जो आत्मा की अंतर निधि को नहीं खोलता, वह आत्मा के मोक्षमार्ग को नहीं जानता। अकेले द्रव्यलिंग को-शुभराग को जो मोक्ष का कारण मानता है, वह मोक्षपंथ का विनाश करनेवाला है अर्थात् वह आत्मा स्वयं मोक्षमार्ग से भ्रष्ट है। जो अकेले व्यवहार को ही मोक्षमार्ग मानता है, वह मोक्षमार्ग का आराधक नहीं है किन्तु उसकी विराधना करता है; वह अपने आत्मा के आचरण से भ्रष्ट है। अहो! अन्तर में आत्मा की शांति में लीन होना, वह मोक्षमार्ग है; उसकी खबर अज्ञानी को नहीं है। अंतरंग शांति के वेदन बिना जो जीव अकेले शुभ में वर्तता है, उसे छुटकारे का मार्ग हाथ नहीं लगा है; वह मोक्षमार्ग से भ्रष्ट है; इसलिये चिदानन्दस्वरूप आत्मा की श्रद्धा-ज्ञान पूर्वक उसमें लीनतारूप चारित्रदशा धारण करने का उपदेश है।

अब कहते हैं कि—तपश्चरणादि और वैराग्य भावनापूर्वक तू ज्ञान को भा! जो मात्र सुख शीलियापने का सेवन करके ज्ञान की बातें करते हैं, वे प्रतिकूलता के प्रसंग पर वह ज्ञानभावना कैसे टिका सकेंगे? इसलिये सहनशीलतापूर्वक चैतन्यशक्ति के आलम्बन से तू ज्ञान भावना भा-ऐसा उपदेश है। वैराग्यपूर्वक व्रत-तपादि के अभ्यास सहित तू ज्ञानस्वभाव की भावना कर; जिसने ऐसी

भावना भायी है, उसे चाहे जैसी प्रतिकूलता में भी ज्ञान भावना नहीं छूटती। मरण की बात आये, वहाँ अज्ञानी भड़क उठता है; ज्ञानी तो वैराग्यपूर्वक ज्ञान भावना भाता है; इसलिये उसे मरण का भी भय नहीं है। उसकी ज्ञान भावना नहीं छूटती। जिसने बारम्बार आत्मानुभव का प्रयोग किया है, स्वभाव में एकाग्र होने की परीक्षा की है, उसकी ज्ञान भावना प्रतिकूलता के प्रसंग पर भी जागृत रहती है; इसलिये पहले से ही कष्ट सहित अर्थात् सहनशीलता के प्रयत्न सहित ज्ञान भावना करने का उपदेश है।

'मैं आत्मा हूँ, शरीर मेरा नहीं है'—ऐसी सामान्य धारणा की हो, किन्तु अन्तर में यथार्थ भेदज्ञान करके उसकी भावना न भायी हो, उसे जबतक शरीरादि की अनुकूलता हो, तबतक तो ऐसा लगता है कि ज्ञान है; किन्तु जब शरीर में वेदना हो, देह छूटने का प्रसंग आये अथवा अन्य कोई प्रतिकूल प्रसंग आये तो वहाँ उनकी धारणा नहीं टिकेगी; देहादि में एकाकार होकर पिस जायेगी। इसलिये यहाँ ऐसा उपदेश है कि अभी से देहादि के प्रति उदासीनता की भावनापूर्वक तू ज्ञान का अभ्यास कर। ज्ञानस्वभाव में एकाग्रता का प्रयत्न कर। वर्तमान में देहादि के प्रति उदासीनता पूर्वक वैराग्य का सेवन किया होगा तथा ज्ञान की दृढ़ता की होगी तो चाहे जैसी प्रतिकूलता में वह टिकी रहेगी। जिसे अनुकूलता का जितना प्रेम है, उसे प्रतिकूलता में उतना ही द्वेष हुए बिना नहीं रहेगा। अनुकूलता हो या प्रतिकूलता, ज्ञानी तो उन दोनों से भिन्न आत्मा को जानकर प्रतिक्षण-प्रतिपल उसी की भावना भाते हैं। ज्ञान की सच्ची भावना हो तो वह समय पर आकर उपस्थित होती है। जीवनभर सामायिक तथा व्रतादि किये हों और जब मरण प्रसंग आये, तब कोई कहे कि—'भाई! देह से भिन्न आत्मा का स्मरण करो...' वहाँ कहने लगे कि—'इस समय आत्मा की बात न कहो, अभी तो इस देह में पिसा जा रहा हूँ।'—देखो, यह सच्ची भावना नहीं कहलाती; धर्मात्मा को ऐसे परिणाम नहीं होते। धर्मी तो सदैव चैतन्यस्वभाव के अवलम्बन में रहने की अपनी शक्ति की परीक्षा करते हैं, बारम्बार उसका अभ्यास करते हैं; इसलिये बाह्य प्रतिकूलता आने पर भी उनकी ज्ञानभावना नहीं छूटती। अहो! अंतर में आत्मा ही मेरा आलम्बन है!ऐसी जिसने भावना की है, उसमें एकाग्रता का अभ्यास किया है, उसे किसी भी प्रसंग पर ज्ञानभावना नहीं छूटती; उल्टी समय पर उसकी उग्रता होती है। संयोग से भिन्नता जानी है और भिन्न चैतन्य की भावना भायी है;—वह भावना धर्मी को आत्मा के अवलम्बन से हुई है। इसलिये किसी भी संयोग में उनकी वह भावना नहीं छूटती। इसलिये हे भव्य! ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा की श्रद्धा-ज्ञान करके कष्टपूर्वक-उद्यमपूर्वक उसकी भावना कर,—ऐसा उपदेश है।

पू० श्री कानजी स्वामी के पुनीत प्रभाव से

- १६७—वीतरागी भगवन्तों के जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा हुई,
- १५—नये दि० जिन मन्दिर;
- ९—बार पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हुए,
- ७—जगह वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव,
- ३—लाख उपरांत दि० जैन सिद्धान्त के अनुसरण करनेवाली पुस्तकें प्रकाशन,
- २५—उपरान्त कुमार भाई-बहिनों ने आजीवन ब्रह्मचर्य की दीक्षा ली,
- हजारों जिज्ञासु जीवों दिगम्बर जैन धर्म में दीक्षित हुए,
- श्राविका-ब्रह्मचर्याश्रम की स्थापना हुई,
- दो बार गिरनारजी तीर्थ की संघ सहित यात्रा हुई,
- सम्मेदशिखरजी आदि तीर्थ क्षेत्रों की संघ सहित यात्रा हुई,

('शासन प्रभाव') पुस्तिका में से

सोनगढ़ में सिद्धचक्रविधान

सोनगढ़ में अषाढ़ सुदी ७ से १५ तक नन्दीश्वर-अष्टाह्निका महोत्सव आनन्द से मनाया गया। गत अष्टाह्निका में (फाल्गुन में) तो शाश्वत् तीर्थाधिराज श्री सम्मेदशिखरजी आदि तीर्थधामों की यात्रा पू० कानजी स्वामी के साथ हजारों भक्तों ने उल्लास पूर्वक की, यह अपूर्व तीर्थयात्रा के निमित्त से इस अष्टाह्निका दरम्यान सोनगढ़ में श्री सिद्धचक्रविधान-पूजन बहुत उल्लासपूर्वक सजधज से किया गया था। इस विधान में पहले दिन आठ, और बाद में हर रोज दूने-दूने करते अंतिम दिन १०२४ अर्घ चढ़ाने का होता है। सिद्ध भगवंतों का यह सिद्धचक्रविधान पूजन सुन्दर अध्यात्मभावों से भरा हुआ है। सिद्ध भगवंतों के सिद्धिधाम की आनन्द भरी यात्रा के बाद सिद्ध भगवन्तों का यह महा पूजन करने में भक्तों को बड़ा उल्लास व भक्ति उल्लसते थे। पूजन पूर्णता के बाद पूर्णिमा के दिन जिन मन्दिर में श्री जिनेन्द्र भगवान का महाअभिषेक किया गया था। सिद्धचक्रविधान में जाप वगैरह योग्यविधि की गई थी।

सोनगढ़ में वीर शासन प्रवर्तन महोत्सव

श्रावण वदी एकम के दिन भगवान महावीर प्रभु का दिव्यध्वनि खिरने का मंगल दिन 'वीर शासन प्रवर्तन' एवं 'शासन का बैसता वर्ष' के रूप में सोनगढ़ में मनाया गया था। प्रात: श्री महावीर भगवान का व दिव्यध्वनि जिनवाणी माता का समूह पूजन करके, श्री जिनवाणी माता की 'प्रवचन यात्रा' निकली थी। इसके बाद पू० श्री कानजी स्वामी का प्रवचन हुआ,–विपुलाचलधाम की अभी हाल में ही ताजी यात्रा की होने से पू० स्वामीजी का भावभीना प्रवचन विपुलाचल तीर्थधाम का फिर साक्षात्कार कराता था, इतना ही नही, बल्कि भगवान के समवसरण का व दिव्यध्वनि का भी मानों फिर साक्षात्कार कराते थे। ये श्रेणिक राजा की राजधानी राजगृही, ये महावीर भगवान, ये समवसरण, ये इन्द्र, ये मानस्तंभ, ये इन्द्रभूति का गणधरपद, ये दिव्यध्वनि, ये अंगपूर्वों की रचना, ये श्रेणिक राजा, ये सभाजनों–इस तरह अमृतमयी धर्म वर्षा का सारा चितार पू० स्वामी के प्रवचन के समय अपनी स्मृति में उपस्थित हो जाता था।

श्रुतवत्सल संत-त्रिपुटी द्वारा रक्षित
तीर्थंकरदेव का दिव्य उत्तराधिकार
[श्रुतपंचमी-महोत्सव]

दो श्वेत–उज्ज्वल वृषभ चले आ रहे हैं.... आकर भक्तिपूर्वक चरणों में नमस्कार कर रहे हैं... किसी शुभ घड़ी में ऐसा मंगल स्वप्न दिखाई दे रहा है।

वे स्वप्नदृष्टा हैं महामुनिराज धरसेनाचार्यदेव।

अल्पनिद्रा में वह मंगल सूचक दृश्य देखकर वे संतुष्ट होते हैं।

'जय हो श्रुतदेवता की....' ऐसा आशीर्वाद उन श्रुतवत्सल संत के मुख कमल से निकल पड़ता है।

आज से शताब्दियों पूर्व का यह पावन प्रसंग है।

इस पावन प्रसंग की जन्मभूमि थी सौराष्ट्र के गिरनार तीर्थ की चन्द्रगुफा!

दूसरे दिन प्रात:काल धर्मधुरी का भार वहन करने में समर्थ ऐसे दो मुनिराज आये हैं... वे

भक्ति और विनय पूर्वक महामुनिराज धरसेनाचार्यदेव के चरणों में नमस्कार करते हैं।

तीन दिन बाद परीक्षा करके उनकी उत्तम बुद्धि और उत्तम धैर्य से प्रसन्न होकर उन्हें महावीर भगवान का परम्परागत दिव्यश्रुत पढ़ाते हैं। सर्वज्ञदेव के श्रीमुख से प्रवाहित महास्रोत मुनिवरों के हृदय में भर रहे हैं।

इस प्रकार भगवान धरसेनाचार्य द्वारा पुष्पदन्त और भूतबलि—दोनों मुनिराजों को अषाढ़ शुक्ला एकादशी के दिन परिपूर्ण ज्ञान अर्पण कर दिया जाता है और देव आकर उन 'श्रुतधरों' की पूजा करते हैं।

पश्चात्, तीर्थंकर भगवान की ओर से परम्परागत प्राप्त हुए ज्ञाननिधान का वह अपूर्व उत्तराधिकार सदैव अक्षुण्ण रहे—उसके लिये पुष्पदन्त और भूतबलि दोनों आचार्य भगवन्त उस ज्ञान को 'षट्खण्डागम' की रचना द्वारा शास्त्रारूढ़ करते हैं और उसे उपकरण मानकर अंकलेश्वर (गुजरात) में चतुर्विध संघ सहित महामहोत्सव पूर्वक उस श्रुत की पूजा करते हैं।

जबसे यह पुनीत प्रसंग हुआ, तभी से वह दिन 'श्रुतपंचमी' के रूप में प्रसिद्ध है; और आज भी जैन समाज में उल्लासपूर्वक यह दिन मनाकर श्रुत के प्रति भक्ति व्यक्त की जाती है।

—यह धन्य दिन था ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी! तीर्थंकर भगवान का उत्तराधिकार प्रदान करने वाले उस 'श्रुत वत्सल संत-त्रिपुटी' की जय हो!

जिज्ञासुओं और जिन मन्दिरों को भेंट

आत्मधर्म मासिक की सजिल्द फाइले जिसका प्रत्येक का ३।।।) रुपये मूल्य है, यह फ्री देनी हैं, जिसमें पूज्य श्री कानजी स्वामी के आध्यात्मिक प्रवचन हैं। वर्ष १-५-११-१२ इन चार सालों की ही फाइलें हैं। एक-एक फाइल का डाकखर्च ॥) आने भेजकर मंगा लेवें। ज्यादा मंगाने वालों को रेल पार्सल से भेजी जा सकती है।

पता:—श्री जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट पो० सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

सम्यक्त्व की महिमा सूचक

प्रश्नोत्तर

प्रश्नः—जगत में सच्चा पण्डित कौन है ?

उत्तरः—सिद्धि करनेवाले ऐसे सम्यक्त्व को जिसने स्वप्न में भी मलिन नहीं किया, वही सच्चा पण्डित है। (मोक्ष पाहुड़ ८९)

प्रश्नः—जिनवर देव ने गणधरादि शिष्यों को जिस धर्म का उपदेश दिया, उस धर्म का मूल क्या है ?

उत्तरः—भगवान द्वारा उपदेशित धर्म का मूल सम्यग्दर्शन है।—'**दंसणमूलो धम्मो**' (दर्शन पाहुड़-२)

नया प्रकाशन

मोक्षमार्ग प्रकाशक की किरणें

द्वितीय भाग

पत्र संख्या ४५३ सजिल्द, मूल्य लागत मात्र २) पोस्टेज अलग। जिसमें सातवें अधिकार में से जैनमत अनुयायी मिथ्यादृष्टि के स्वरूप पर बड़ी स्पष्ट शैली से सत्पुरुष कानजी स्वामी ने व्याख्यान किये हैं, उन व्याख्यानों का सार है। जो बड़ी महत्वपूर्ण प्रयोजनभूत भूलें और सम्यक्ज्ञान का स्वरूप समझने के लिये स्वच्छ दर्पण समान है। आज ही मंगाइये।

पता—जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

❀ क्षमा याचना ❀

इस मास का अंक प्रेस कर्मचारियों को इन्फ्लुएन्जा हो जाने की वजह से ४-५ रोज लेट निकला है। अतः इसके लिये हम हमारे प्रिय पाठकों से क्षमा चाहते हैं।

—प्रकाशक

नया प्रकाशन :—

श्री 'जैन तीर्थ पूजापाठ संग्रह'

भक्ति-पूजा और तीर्थयात्रा के समय जिनेन्द्रों की बड़ी-बड़ी पूजा के लिये उपयोगी पुस्तक है, जिसमें भारतवर्ष के प्रायः सब तीर्थक्षेत्र तथा अतिशय क्षेत्रों में पूजा के समय जो पूजायें चलती हैं, वह हैं, और यात्रियों के लिये आवश्यक सूचनायें तथा तीर्थ क्षेत्रों के विषय में प्रयोजनभूत जानकारी, कहाँ से कहाँ जाना होता है इत्यादि वर्णन होने से अतिउपयोगी हैं। बहुत अच्छे कागज पर सुन्दर ढंग से छपी है, बढ़िया कपड़े की जिल्द, पत्र सं० ३०० मूल्य १-७-० पोस्टेज आदि अलग—

पता—जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

प्रौढ़ उम्र के गृहस्थों के लिये

जैन दर्शन शिक्षण-वर्ग

इस साल श्रावण शुक्ला ३ सोमवार ता० २९-७-५७ से लेकर भाद्रपद कृष्णा ९ सोमवार ता० १९-८-५७ तक श्री जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट की ओर से सोनगढ़ में जैन दर्शन शिक्षण वर्ग चलेगा। तत्त्वज्ञान का प्रारंभिक अभ्यास करनेवाले जिज्ञासुओं को इस वर्ग का शिक्षण बहुत उपयोगी है। इसके उपरांत पू० श्री कानजी स्वामी के प्रवचनों का भी लाभ मिलेगा। इस शिक्षण वर्ग में आने वाले गृहस्थों के लिये ठहरने व भोजन की व्यवस्था संस्था की ओर से होगी। वर्ग में सम्मिलित होने के इच्छुक जैन बन्धुओं को अपने आने की अग्रिम सूचना कर देना चाहिये और निश्चित की हुई अवधि के दरमियान आ जाना चाहिये

श्री जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

परमपूज्य श्री कानजी स्वामी के आध्यात्मिक वचनों का अपूर्व
लाभ लेने के लिये निम्नोक्त पुस्तकों का—

अवश्य स्वाध्याय करें

मूल में भूल	।।।)	जैन बालपोथी	।)
श्री मुक्तिमार्ग	॥=)	सम्यग्दर्शन	१ ॥=
श्री अनुभवप्रकाश	॥)	द्वादशानुप्रेक्षा (स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षा)	२)
श्री पंचमेरु आदि पूजासंग्रह	।।।)	जैन तीर्थ पूजा पाठ संग्रह कपड़े की जिल्द	१ ।=)
समयसार प्रवचन भाग २	५ ।)		
समयसार प्रवचन भाग ३	४ ॥)	भेदविज्ञानसार	२)
प्रवचनसार	५)	अध्यात्मपाठसंग्रह	५)
अष्टपाहुड़	३)	समयसार पद्यानुवाद	।)
चिद्विलास	१=)	निमित्तनैमित्तिक संबंध क्या है ?	=)
आत्मावलोकन	१)	स्तोत्रत्रयी	॥)
मोक्षमार्ग-प्रकाशक की किरणें प्र०	१ ।=)	लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका	=)
द्वितीय भाग	२)	'आत्मधर्म मासिक' लवाजम-	३)
जैन सिद्धांत प्रश्नोत्तरमाला प्र०	॥-)	आत्मधर्म फाइलें १-२-३-५- ६-७-८-१० वर्ष	३ ।।।)
द्वितीय भाग	॥-)		

हिन्दी आत्मधर्म की फाइलें

वर्ष १, २, ३, ५, ६, ७,, ८, १० यह आठ फाइलें एक साथ लेने
वालों को ३०-०-० के बदले २०-०-० में दी जायेंगी।

[डाकव्यय अतिरिक्त]

मिलने का पता—
श्री जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

मुद्रक—नेमीचन्द बाकलीवाल, कमल प्रिन्टर्स, मदनगंज (किशनगढ़)
प्रकाशक—श्री जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के लिये—नेमीचन्द बाकलीवाल।